❖ ओ३म् ❖

आर्ष-ज्योतिः

श्रीमद् दयानन्द वेदार्ष-महाविद्यालय-न्यास

का

द्विभाषीय मासिक मुखपत्र

कार्तिक मास, विक्रम संवत् – २०७०

वर्ष : ६ अंक ६५ नवम्बर २०१३ मूल्य : ५.०० रुपये

ज्योतिष्कृणोति सूनरी

संरक्षक - संस्थापक
स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती

❖

मुख्य सम्पादक
डॉ. धनञ्जय आर्य (अवैतनिक)

❖

सम्पादक
चन्द्रभूषण आर्य
रवीन्द्र आर्य

❖

कार्यकारी सम्पादक
ब्र. शिवदेव आर्य

❖

व्यवस्थापक
ब्र. अनुदीप आर्य
ब्र. कैलाश आर्य

❖

कार्यालय
श्रीमद्दयानन्द आर्ष ज्योतिर्मठ गुरुकुल
दून वाटिका-२, पौंधा, देहरादून (उत्तराखण्ड)
दूरभाष - ०१३५-२१०२४५१
जंगमवाणी - ०९४१११०६१०४
ई-मेल : arsh.jyoti@yahoo.in
website: www.pranawanand.org

❖

सदस्यता शुल्क
आजीवन - १०००.०० रुपये
वार्षिक - ५०.०० रुपये
एक प्रति - ५ रुपये

विषय-क्रमणिका

विषय	पृष्ठ
सम्पादकीय	२
ईश्वर प्राप्ति एवं परिग्रह	३
सर्ववातामयहरी-निर्गुण्डी	८
स्वामी दयानन्द एक महान् व्यक्तित्व	९
राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर.....	१०
निमन्त्रण पत्र	११
अथ श्री ओमानन्द लहरी	१२
समाचार दर्पण	१८
संस्कृत-शिक्षणम्	२०

नीमीतीरे सततसुखदे सर्वतो दर्शनीयम्,
पौन्धाग्रामे नगरनिनदाद् दूरमीक्ष्यं मनुष्यैः।
हैमे तुङ्गे शिखरिशिखरे शोभनोपत्यकायाम्,
आर्षज्योतिर्मठगुरुकुलं राजते संसृतौ मे।।

रवीन्द्रकुमारः

न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः

सम्पादक की कलम से...

वर्तमान परिपेक्ष में शिक्षा से ही देश की उन्नति संभव...

सुहृद् पाठकवृन्द! हमने बहुशः पढ़ा व सुना है कि किसी भी राष्ट्र के उन्नयन अथवा अवनयन में वहाँ की शिक्षा पद्धति की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। अमेरिका जैसे देशों के विश्वमंच पर महाशक्ति के रूप में विद्यमान होने में भी वहाँ की शिक्षा पद्धति का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

वर्तमान में हमारा देश अनेक जटिल समस्याओं से ग्रस्त हो रहा है। अतः इसका प्रमुख कारण हमारी दोषपूर्ण शिक्षा पद्धति है। ऐसे समय में यदि देश को इन जटिलताओं से मुक्त करा सकती है तो वो है श्रेष्ठ शिक्षा पद्धति। क्योंकि शिक्षा में वो सामर्थ्य होता है जो देशहित को सर्वोपरि उदित करता है।

यह तथ्य हम सभी स्वीकार करते है कि देश के वर्तमान, भविष्य का प्रमुख आधार शिक्षा पद्धति एवं शिक्षित वर्ग ही है। आज समाज में तथाकथित शिक्षित जन देश को दिशा व दशा देने वाले दृष्टिगत होते हैं पुनरपि हमारा देश समस्याओं के तिमिरान्धत्व में विचलित होता जा रहा है, आखिर क्यों? ऐसा क्या हुआ? आज शिक्षा की तो कोई कमी नहीं, हर प्रकार से उच्च से उच्च शिक्षा दी जा रही है।

तथाकथित उच्च शिक्षा को प्राप्त किये हुए नायक भी घोटाले, रिश्वतखोरी, बलात्कार जैसे अनेक दोषों में लिप्त दिखायी देते हैं। इन सबको हम देखते है तो इस नतीजे पर पहूँचते है कि- कहीं-न-कहीं हमारी शिक्षा पद्धति (जो अधिकांश मैकाले की देन ही है)दोषपूर्ण है। यदि विचार करें विश्वगुरु भारत का तो हमारा ध्यान जाता है उस प्राचीन युग पर जब हमारा राष्ट्र उन्नति के शिखर पर था भले ही आज हमारे युवा विद्यार्थी विदेशों में पढ़ना गौरव व गुणवत्तपूर्ण समझते हो। वस्तुतः यह प्राचीन पद्धति का ही उत्कर्ष था कि उस समय समस्त विश्व में शिक्षा का प्रमुख केन्द्र भारत ही था। जिसके कारण लोग कहा करते थे कि-

एतत् देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं-स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।।

दुर्भाग्यवश हमने उच्च आदर्श युक्त आर्ष शिक्षा पद्धति की अवमानना कर आधुनिकता के आवरण में एक ऐसी पद्धति को अपना लिया है, जो हमें हमारे आदर्शों से अवगत करा रही है, जो हमें हमारे मूल से पृथक् कर रही है।

आज आवश्यकता है कि हम अपनी

आधुनिक शिक्षा योजनाओं में आर्ष शिक्षा के उच्चादर्शों का समावेश करें।

आर्ष शिक्षा वह है जो ऋषिकृत शिक्षा पद्धति है (ऋषिणा प्रोक्तमार्षम्)। अनार्ष शिक्षा (आधुनिक शिक्षा) वह है जो आज विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में प्रदान कराई जा रही है। आर्ष शिक्षा में नैतिकमूल्यों के उन पहलुओं को उद्धृत किया गया है, जिससे प्रत्येक व्यक्ति निजी तुच्छ स्वार्थों को छोड़कर देशहित में अपने हित को समझते हुए कार्य करने की भावना को दर्शाया गया है। जहाँ देशहित, व्यवहारिक तथा नैतिकमूल्यों की शिक्षा प्रदान कराई जाती है परन्तु आज की शिक्षा में ये दृष्टिपात नहीं हो पा रहा है। आज की शिक्षा पद्धति को व्यक्ति धन कमाने का द्वार मानता है। ये भी गलत नहीं है कि हम धन न कमायें। धन कमाना चाहिए, क्योंकि धन कमाना शिक्षा का उद्देश्य ही है परन्तु उस धन को गलत तरीकों से नहीं कमाना चाहिए। आज लोग लाखों-लाखों रूपये देकर एम.बी.ए., एम.बी.बी.एस. आदि डिग्रियों को प्राप्त कर लाखों रूपये की घूस देकर नौकरी को प्राप्त करते हैं और नौकरी प्राप्त करने के बाद जो पैसा उन्होंने नौकरी को प्राप्त करने में लगाया है उसे सर्व प्रथम निकालते हैं। चाहे उस समय अधर्म हो रहा हो या धर्म हो रहा हो, उसकी उन्हें कोई चिन्ता नहीं होती।

आज एक स्कूल में अध्यापकों का उद्देश्य शिक्षा देना नहीं होता उनका उद्देश्य तो पैसा कमाना होता है। महीना पूरा हुआ कि उनको अपने वेतन की चिन्ता होने लगती है। छात्र भी लाखों रूपये देकर शिक्षा को प्राप्त करते है इससे इनके अन्तःकरण में भी ये भाव उत्पन्न हो जाते है कि हमने तो बहुत-सा धन खर्च कर शिक्षा को प्राप्त किया है तो मेरा प्रथम लक्ष्य धन कमाना ही होगा न कि शिक्षा देना। परन्तु आर्ष शिक्षा पद्धति को दृष्टिगत करें तो ज्ञात होता है कि आर्ष शिक्षा पद्धति में निःशुल्क शिक्षा प्राप्त करने व कराने का विधान है, इसीलिए उनका उद्देश्य केवल मात्र विद्या की उन्नति ही होता है। ऋषि लोग मन्त्रद्रष्टा होते हैं, वो आर्ष-शिक्षा पद्धति के माध्यम से सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय की भावना को प्रस्तुत करते हैं।

हमें आधुनिक शिक्षा पद्धति को भी छोड़ने की आवश्यकता नहीं है अपितु उस शिक्षा व्यवस्था में जो दोष हैं, उनको हटा कर आर्ष शिक्षा पद्धति के मन्तव्यों को स्वीकार करना पड़ेगा, जो उन्नति के उच्च शिखर को स्थापित करते हो।

यदि हम राष्ट्र निर्माण चाहते है तो निश्चित है आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में आर्ष शिक्षा को समाहित करना ही होगा तभी जाकर राष्ट्रनिर्माण सम्भव हो सकेगा। अन्तिम निर्णायक तो आप सभी पाठक ही हैं।

शिवदेव आर्य

गुरुकुल-पौन्धा, देहरादून

प्रकाशित लेखों से सम्पादक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। किसी भी वाद के लिए न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा।

ईश्वर प्राप्ति एवं परिग्रह

-मनमोहन कुमार आर्य

जब भी कोई वस्तु बनाई जाती है तो उसे बनाने के एक या अधिक उद्देश्य होते हैं। हम जानते हैं कि ईश्वर ने हमें बनाया है और इस संसार में भेजा है, माता-पिता हमारे जन्मदाता हैं जो ईश्वरीय विधान का पालन करते हुए हमें जन्म देकर हमारा पालन-पोषण करते हैं। हमारे जन्म में मुख्य भूमिका ईश्वर की होती है। हम देखते हैं कि अज्ञानी व अशिक्षित आदिवासी मनु यों के घरों में भी पुत्र वा पुत्री आदि सन्तानों का जन्म होता है एवं हमारे वह बन्धु भी अपनी सन्तानों का पालन करके उन्हें बड़ा करते हैं। कोई यह नहीं कह सकता उन्होंने अपनी सन्तानों को बनाया है। अत: यह निर्विवाद तथ्य है कि सन्तान ईश्वरीय नियमों से बनता है। **क्या हमारे व अन्य प्राणियों के जीवन का कोई उद्देश्य है अथवा नहीं, यह विचारणीय है?** इस प्रश्न का उत्तर सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर से प्राप्त ज्ञान ''वेद'' में उपलब्ध है और वेदों की उत्पत्ति के बाद ऋषि-मुनियों ने जो ग्रन्थ बनायें, उनमें भी इस प्रश्न पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। **इन सबका निष्कर्ष यह है कि ईश्वर ने जीवात्मा को मनुष्य का जन्म उनके पिछले जन्मों में किए गए पाप व पुण्यों, शुभाशुभ कर्मो, संचित कर्मो अथवा प्रारब्ध के आधार पर दिया है।** जीवात्मा को हम आनन्द की प्राप्ति के लिए प्रयत्नरत व कर्मरत देखते हैं। इसके लिए वह अज्ञान के कारण क्षण-भंगुर सुखों की प्राप्ति में लगा रहता है और कालान्तर में आयु पूर्ण होने पर मृत्यु आ जाती है जिस कारण जीवात्मा शरीर से निकल जाता है। मनुष्य अपना अधिकांश समय धनोपार्जन में व्यतीत करता है जिसका उद्देश्य यह है कि धनोपार्जन कर वह अधिक से अधिक सुखों को प्राप्त कर सके। धन से अपने से अधिक रूपवान, गुणवान व योग्य कन्या से विवाह किया जा सकता है, भव्य व सुखदायक निवास बनवाया या खरीदा जा सकता है, गाड़ी खरीदी जा सकती है, बाजार में उपलब्ध सुख-सुविधाओं प्रदान करने वाला सामान क्रय किया जा सकता है और अपनी सन्तानों को पढ़ा-लिखा कर उन्हें अच्छा सभ्य व व्यवसायी बनाया जा सकता है। **यहां प्रश्न यह सामने आता है कि क्या यही जीवन का वास्तविक उद्देश्य एवं अन्तिम लक्ष्य है?** आम व्यक्ति व आधुनिक शिक्षा में दीक्षित व्यक्ति कहेगा कि हां, यही जीवन का उद्देश्य व लक्ष्य है, परन्तु एक विवेकशील इससे सहमत नहीं हो सकता। कारण यह है कि इन सब सुखों की सामग्री से क्षणिक वा अल्पकालिक सुख तो अवश्य ही प्राप्त होते हैं परन्तु दीर्घकालिक व इस जन्म के बाद भावी जन्मों में सुख प्राप्त होने की कुछ भी आशा व विश्वास नहीं है। अत: पहला प्रश्न तो यही होता है कि क्या यह अन्तिम जन्म है या इसके बाद हमारी आत्मा जो एक अनुभवशील चेतन तत्व है, इस आत्मा का पुनर्जन्म या नया जन्म होता है जैसा कि वर्तमान में हुआ था। **इस सम्भावना पर भी विचार करना उचित होगा कि क्या मनुष्य का अगला जन्म या पुनर्जन्म मनुष्य की ही योनी में होता है या फिर अन्य पशु, पक्षी, कीट-पतंग, जलचर आदि के रूप में भी हो सकता है?** इन प्रश्नों का उत्तर तो यही है कि हमारा यह जन्म न पहला है न अन्तिम। विज्ञान का नियम है कि किसी भी अस्तित्व वाले पदार्थ का अभाव या नाश नहीं होता। इसे अनश्वरता का नियम भी कह सकते हैं। **गीता में बहुत ही सरल शब्दों में कहा गया है कि अभाव से भाव व भाव से अभाव उत्पन्न नहीं होता।** इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक उत्पन्न पदार्थ का कोई अन्य पदार्थ मूल कारण होता है। उस बने हुए व दिखाई देने वाले पदार्थ का कालान्तर में किसी कारण दृष्टिगोचर न होने का अर्थ होता है कि वह अपने सूक्ष्म कारण रूप में बदल गया है, परन्तु उसकी सत्ता समाप्त नहीं होती, वह सूक्ष्म अदृश्य कणों के रूपों में सृष्टि में विद्यमान रहती है। वह अदृष्य हो गया पदार्थ निर्माण की सभी परिस्थितियां मिलने पर पुन: पूर्व जैसा व कुछ भिन्न रूप वाला बन सकता है। हमारी आत्मा हमारे पूर्व जन्म की मृत्यु होने पर प्रारब्ध के अनुसार ईश्वर की प्रेरणा व नियमों से हमारे इस कारीर में आविर्भूत हुई है और कालान्तर में इस शरीर की मृत्यु होने पर बचे हुए प्रारब्ध व इस जन्म के संचित कर्मो से जो नया प्रारब्ध बनेगा, उसके अनुसार इसका पुनर्जन्म होगा। जन्म क्योंकि प्रारब्ध पर निर्भर करता है अत: मनुष्य का जन्म मनुष्य योनी

में ही जो वर्तमान के समान एवं इससे कुछ निम्न या उच्च भी हो सकता है, होगा तथा प्रारब्ध के ही अनुसार मनु य योनि से भिन्न वा इससे निम्न पशु, पक्षी आदि योनियों में भी हो सकता है। **यदि ऐसा न होता तो एक ही परिवार मे जन्म लेने वाली सन्तानों के गुणों व स्वभावों तथा शारीरिक क्षमताओं में अन्तर न होता।**

अत: अब तक के विवेचन से यह तथ्य सामने आया है कि हम अपने प्रारब्ध का उपभोग करने के लिए ही संसार में जन्में हैं। जिस प्रकार जन्म का परिणाम मृत्यु एवं रात्रि का परिणाम दिन है, उसी प्रकार से बन्धन का अन्तिम परिणाम मुक्ति व मुक्ति का परिणाम बन्धन होता है। मनुष्य व अन्य योनियों के जीवन एक प्रकार का बन्धन है जो हमारे कर्मो के फलों से जुड़ा या बन्ध है जिन्हें हमें भोगना है। इन योनियों में अपने जीवन में हमें अपनी इच्छानुसार सुखों आदि का चयन करने व इच्छित वस्तुओं को प्राप्त करने की स्वतन्त्रता नहीं है। हमें मनुष्य योनी में कर्म करने का अधिकार तो है परन्तु उनके फलों पर हमारा अधिकार नहीं है। वह ईश्वरीय नियमों के आधीन है। बन्धन का परिणाम दु:ख होता है एवं कुछ परिस्थितियों में थोड़ा सुख भी हो सकता है व होता है। **हम आज जीवित हैं, निरोग हैं, स्वावलम्बी हैं एवं सुखी है। परन्तु भविष्य की कोई स्योरिटी, गारन्टी या निश्चितता नहीं है कि यह स्थिति बरकरार रहेगी या इससे उन्नत होगी। हमें अनुमान व अनुभव के आधार पर ज्ञान है कि भविष्य में हमारी मृत्यु होगी, रोग आ सकते हैं, स्वावलम्बन परावलम्बन में बदल सकता है, सुख के स्थान पर छोटे व बड़े दु:खों से भी दो चार होना पड़ सकता है। मृत्यु का दु:ख अपने आप में सबसे बड़ा दु:ख है। क्या इसकी कोई दवा है जिससे इसे टाला व हटाया जा सके या फिर मृत्यु का ग्रास बनना ही होगा।** यदि हमारे जीवन का पुरूषार्थ हमें धन व सुख सुविधायें तो दे दें, परन्तु संसार के सबसे बड़े दु:ख मृत्यु से न बचाये तो फिर धन से मूल्यवान वह वस्तु है जो हमें मृत्यु के दु:ख को न होने दे। **अध्यात्म में इसकी गारण्टी है कि मृत्यु के दु:ख पर विजय पायी जा सकती है। महर्षि दयानन्द के जीवन का उदाहरण हमारे सामने है, उन्होंने न केवल मृत्यु के दु:ख पर विजय पायी अपितु अपने प्रिय शिष्य गुरूदत्त विद्यार्थी को नास्तिक से आस्तिक बना दिया और उनकी मृत्यु जो मात्र २५ वर्ष की अवस्था में आ गई, उन्हें विचलित व दु:खी न कर सकी। स्वामी श्रद्धानन्द ने भी उनकी प्रेरणा से नास्तिकता से मुक्त होकर ईश्वर के सान्निध्य को प्राप्त किया, उन्होंने सुख व सन्तुष्ट मन से जीवन की यात्रा पूरी की और चैन से मृत्यु को गले लगाया और वह दूसरों के प्रेरणास्रोत भी बने।** यदि ऐसा है तो फिर हमारे जीवन का उद्देश्य एकमात्र धनोपार्जन न होकर एक सन्तुलित जीवन होना चाहिये जिसमें धन प्राप्ति को उतना ही महत्व मिले जितना कि आवश्यक है और साथ ही मृत्यु के दु:ख पर विजय प्राप्त करने के साथ जन्म-मृत्यु रूपी बन्धन से मुक्ति अर्थात जन्म-मरण के चक्र का अतिक्रमण होकर मोक्ष व मुक्त अवस्था की प्राप्ति हो जिसका वर्णन विश्व प्रसिद्ध पुस्तक ''सत्यार्थ प्रकाश'' में महर्षि दयानन्द सरस्वती ने किया है।

अपरिग्रह से आगे-पीछे व वर्तमान जन्म की यथार्थ कथाओं के ज्ञान के विषय में प्रसिद्ध दर्शनकार पं. उदयवीर शास्त्री लिखते हैं कि ''अपरिग्रह के दृढ़तापूर्वक स्थिर हो जाने पर योगाभ्यासी अपने पूर्व जन्म, चालू जन्म तथा आगे होने वाले जन्म के कारणों को यथायथ जान लेता है। मैं पूर्वजन्म में क्या था? किन कारणों से था? चालू जन्म कैसा हुआ? किन कारणों से हुआ? आगे हम क्या होगें? किन कारणों से होगें? इस प्रकार अपरिग्रह की सिद्धि को प्राप्त हुआ योगी पहले आगे और मध्य के अपने जन्मों के विषय में जिज्ञासा होने पर यथार्थ रूप से उन स्थितियों को जान लेता है।'' दुनिया की सारी दौलत से भी यह स्थिति व लाभ प्राप्त नहीं किया जा सकता। इससे धन-दौलत का वास्तविक मूल्य पता चलता है।

यह तो हमें ज्ञात हो गया कि मनु य जीवन का लक्ष्य मुक्ति है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने का साधन ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना को बताया जाता है और वह वस्तुत: है भी। इसकी कार्य-कारण सिद्धान्त के आधार पर परीक्षा करते हैं। ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना कर जीवात्मा ईश्वर को मुक्ति का पात्र बनाने के लिए मनाता है।

इसके लिए वह अपनी समस्त इच्छाओं, वासनाओं, दुर्गुणों का त्याग कर अधिकाधिक समय ईश्वर सम्बन्धी आर्ष वैदिक साहित्य के चिन्तन, यम-नियमों के पालन, स्वाध्याय, ध्यान, समाधि के अभ्यास में लगाता है व स्वयं को ईश्वर प्रणिधान, सेवा-परोपकार-धर्म प्रचार रूपी साधना व तपस्या से ईश्वर के साक्षात्कार का पात्र बना लेता है। इससे उपासना के क्षेत्र में नई-नई उपलब्धियां प्राप्त होती हैं। वह उनकी उपेक्षा कर और आगे बढ़ता है और ईश्वर साक्षात्कार का लक्ष्य प्राप्त कर लेता है। **ईश्वर साक्षात्कार ही मुक्ति का द्वार है। ईश्वर साक्षात्कार से ही विवेक की प्राप्ती होती है जो मुक्ति का आधार है। विवेक को स्थिर कर मृत्यपर्यन्त जीवनमुक्त अवस्था का पालन कर मृत्यु के पश्चात उपासक मुक्ति को प्राप्त कर लेता है। ऐसा ही वर्णन हमें आर्ष ग्रन्थों व शास्त्रों में मिलता है जो हृदय को पूरी तरह सन्तुष्ट व संशयहीन कर आत्मा को सन्तुष्ट करता है।** यहां थोड़ी चर्चा सत्याग्रह शब्द पर भी कर लेते हैं। सत्याग्रह लक्ष्य प्राप्ति का एक बहुत ही कारगर उपाय है। भक्त या उपासक ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना के माध्यम से एक प्रकार का सत्याग्रह ही करता है और ईश्वर को इष्ट-सिद्धि के लिए प्रार्थना, निवेदन, अनुरोध, आग्रह व विनती करता है एवं इसके साथ अपना जीवन त्याग, तपस्या, बलिदान, साधना का बनाकर उसे मनुष्य-परिवार-समाज-राष्ट्र व विश्व कल्याण के लिए अर्पित करता है। सत्याग्रह की सभी आवश्यकतायें पूरी होने पर लक्ष्य की प्राप्ति हो जाती है। यहां यह जानना आवश्यक है कि ईश्वर की सत्ता धर्मिक, सत्य गुणों से पूरित, सभी जीवों पर माता-पिता के समान कृपा करने वाली होने से योग साधना रूपी सत्याग्रह से लक्ष्य की सिद्धि प्रदान करती है। यदि कोई व्यक्ति या संस्था किसी सरकार या राजनीतिक दल के प्रति सत्याग्रह करते हैं तो यह आवश्यक नहीं की वह उसमें पूरी तरह सफल ही होगा। धार्मिक लोगों के प्रति सत्याग्रह से तो अपनी उचित बातें मनवायी जा सकती है परन्तु अधार्मिक व चारित्रिक दोषों से पूर्ण लोगों से नहीं। वहां तो प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार व यथायोग्य व्यवहार से ही सत्य-लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। स्तुति, प्रार्थना व उपासना से, स्तोता व उपासक जीवात्मा, दुर्गुण, दुर्व्यस्न व दुःखों से दूर होकर ईश्वर के गुण, कर्म व स्वभाव के सदृष्य हो जाता है। ऐसा इसी प्रकार होता है जिस प्रकार शीत से आतुर मनुष्य का शीत अग्नि की प्राप्ति, संगति या उपासना से दूर होता है। महर्षि इस प्रसंग में यह भी लिखते हैं कि उपासक की आत्मा का बल इतना बढ़ता है कि वह पहाड़ के समान दुःख प्राप्त होने पर भी घबराता नहीं है। क्या यह छोटी बात है? **हम समझते हैं कि जब जीवात्मा के गुण कर्म व स्वभाव ईश्वर के अनुरूप हो जायेगें तो साक्षात्कार तो अवश्वमेव होगा ही। उपासना से जीवात्मा के मल, विक्षेप व आवरण कटते हैं, जीवात्मा पवित्र व निर्मल हो जाता है, इस अवस्था में उपासना से ईश्वर का साक्षात्कार सम्भव होता है। ऐसा ही महर्षि दयानन्द ने अपने ज्ञान व अनुभव के आधार पर सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों में बताया है।**

आजकल अधिकांश लोगों का एकमात्र ध्येय धन कमाना बन गया है। धन का परिग्रह ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना में बाधक है या यह समझिये कि दोनों में ३-५ का आंकड़ा है। योगदर्शन के २/३९ सूत्र **'अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथन्ता सम्बोधः।'** के अनुसार परिग्रह में मनुष्य को पूर्व जन्म व पुनर्जन्म का बोध विस्मृत होता है। **अपरिग्रह की सफलता या सिद्धि प्राप्त होने पर इनका बोध हो जाता है।** परिग्रह धन व सम्पत्ति को इकट्ठा करने को कहते है। इसके पीछे धनाभिलाषी की इच्छा अधिकाधिक सुख-सुविधाओं को भोगने की होती है। नियमपूर्वक भोग का अतिक्रमण इन्द्रियों को विषयों के प्रति चंचल बना देता है और ऐसा व्यक्ति ईश्वर की प्राप्ति के मार्ग से भटक कर भोग मार्ग का पथिक बन जाता है। **धन सम्पत्ति की प्राप्ति की वास्तविक स्थिति यह है कि इसको कमाने में दुःख व विपत्तियां, इसकी रक्षा करना भी कष्टप्रद एवं यदि धन किसी प्रकार से कमा लिया तो उसे व्यय करने में दुःख होता है।** अतः आवश्यकता से अधिक धनोपार्जन हर प्रकार से दुःख का ही निमित्त बनता है। धन प्राप्ति करने में जीवन का बहुत बड़ा समय निकल जाता है जिससे ईश्वर की साधना करने के लिए समय ही नहीं मिलता। धन कमाने से मन पर जो संस्कार पड़ते हैं वह

भी ईश्वर प्राप्ति में साधक नहीं अपितु बाधक होते हैं। **अपरिग्रह से आगे-पीछे व वर्तमान जन्म की यथार्थ कथाओं के ज्ञान के विषय में प्रसिद्ध दर्शनकार पं. उदयवीर शास्त्री लिखते हैं कि ''अपरिग्रह के दृढ़तापूर्वक स्थिर हो जाने पर योगाभ्यासी अपने पूर्व जन्म, चालू जन्म तथा आगे होने वाले जन्म के कारणों को यथायथ जान लेता है। मैं पूर्वजन्म में क्या था? किन कारणों से था? चालू जन्म कैसे हुआ? किन कारणों से हुआ? आगे हम क्या होगें? किन कारणों से होगें? इस प्रकार अपरिग्रह की सिद्धि को प्राप्त हुआ योगी पहले आगे और मध्य के अपने जन्मों के विषय में जिज्ञासा होने पर यथार्थ रूप से उन स्थितियों को जान लेता है।'' दुनिया की सारी दौलत से भी यह स्थिति व लाभ प्राप्त नहीं किया जा सकता। इससे धन-दौलत का वास्तविक मूल्य पता चलता है। जन्म-जन्मान्तरों का यथार्थ ज्ञान ईश्वरोपासना व योग साधना से मल, विक्षेप व आवरण के कट व हट जाने से सम्भव होता है जो अन्य किसी प्रकार से सम्भव नही। जब सभी मल, विक्षेप व आवरण हट जाते हैं तो चित्त पर अंकित जन्म-जन्मान्तर के संस्कार उद्‌बुद्ध हो जाते हैं। अध्यात्म में ऐसा होना असम्भव नहीं है। हम तो यहां तक कहेगें कि जीवन में जो स्थान ईश्वरोपासना का है वह अन्य किसी कार्य या साधना का न तो है और न ही हो सकता है।**

अपरिग्रह के सम्बन्ध में यजुर्वेद के मन्त्र की प्रसिद्ध सूक्ति **'तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्'** आदेश करते हुए कहती है कि मनुष्यों का अधिकार संसार के पदार्थो को केवल त्याग की भावना से भोग करने का है। मनुष्य लालच न करें और संसार का धन किसी का व्यक्तिगत व निजी न होकर परम पिता परमात्मा का है जिसके प्रयोग का अधिकार ईश्वर की बनाई हुए जल, वायु, अग्नि आदि की तरह सभी मनुष्यों को समान रूप से अपनी-अपनी आवश्यकता के अनुसार है। जिस प्रकार वायु, जल व अग्नि आदि का अधिक मात्रा में सेवन हानिकारक होता है इसी प्रकार, ईश्वरीय नियम के अनुसार, अपरिग्रह अर्थात् आवश्यकता से अधिक धन का संग्रह हानिकारक अर्थात् दण्डात्मक होता है क्योंकि ऐसा करने से दूसरों के प्रयोग के अधिकार में बाधा आती है। आवश्यकता से अधिक धन का संग्रह परमार्थ कार्य न होकर स्वार्थ का कार्य होता है। स्वार्थी मनुष्य को कोई भी अच्छा नहीं मानता अपितु ज्ञानियों की दृष्टि में वह उपेक्षा, आलोचना व निन्दा का पात्र बनता है। परिग्रह से असन्तोष की भावना भी कुछ जुड़ी होती है। हम समझते हैं कि असन्तोष आध्यात्मिक जीवन के मार्ग का शत्रु एवं उसका बाधक है। इससे मनुष्य में नास्तिकता जन्म लेती है। अधिक धन व साधन सम्पन्न व्यक्तियों का अपनी इच्छाओं पर नियन्त्रण नहीं होता जिससे वह लोभ, जो एक प्रकार से पाप का मूल है, उसका ग्राहक या वाहक बन जाता है। ऐसे व्यक्ति के जीवन को नास्तिकता प्रभावित कर उसे अपना दास बना लेती है। जन्म व मृत्यु के चक्र से मुक्ति व लम्बी अवधि तक ईश्वर के आनन्द की प्राप्ति की अवस्था सत्य ज्ञान व ईश्वर की कृपा से ही मिलती है। आज सारा संसार ही धन के पीछे दौड़ता हुआ दृष्टिगोचर हो रहा है। यह एक अन्धी दौड़ है जिसका अन्त दुःखद होता है क्योंकि मृत्यु आने पर अर्जित धन व सम्पदा यहीं छूट जाती है और अगला नया जन्म, सुख व दुःखादि, इस जन्म के कर्मो के आधार पर निर्धारित होते हैं जिसमें अर्जित धन की भूमिका, मात्र इतनी ही होती है कि वह अच्छे व बुरे, किस प्रकार के कार्यो से अर्जित किया गया तथा उसका उपयोग धर्मार्थ कार्यो यथा वेद विद्या के संरक्षण व परिवर्धन, वैदिक मान्यताओं के प्रचार, यज्ञ, सेवा, दान व परोपकार आदि कार्यो में किया गया या नहीं ? इससे प्रारब्ध बनता है।

एक प्रेरणाप्रद उदाहरण है। सम्पत्ति के एक छोटे से भाग को लेकर किसी धार्मिक प्रवृत्ति के एक पुरूष पर उसके एक पड़ोसी ने एक मुकदमा किया। यद्यपि २८ वर्षो में यह अब अन्तिम स्थिति में पहुंच गया है, पुनः नये विवाद भी पैदा हो सकते हैं, परन्तु इसने साधना में कितनी बाधायें खड़ी की होगीं, यह भुक्तभोगी साधक व धार्मिक प्रवृत्ति का मनुष्य ही जान सकता है। ऐसे अनेकानेक उदाहरण हैं जो उपासना के शत्रु है और हम सबके जीवन में आते जाते रहते हैं। अतः यथासम्भव इनसे बचना चाहिये।

-१९५ चुक्खूवाला,देहरादून-२४८००१

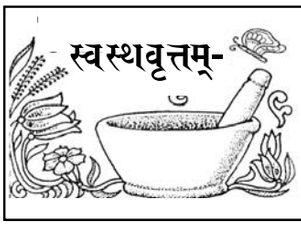

सर्ववातामयहरी-निर्गुण्डी

- ले.डॉ. सत्येन्द्र कुमार आर्य....✍

निर्गुण्डी एक गुल्म जातीय वनस्पति है जो समस्त भारत में,विशेषकर बगीचों में और पहाडों में होता है। इसका पौधा ८-१० फीट ऊंचा होता है। पत्र-अरहर के समान मसृणरोमयुक्त होते हैं। एक वृन्त पर तीन या पाँच पत्रक,१-५ इंच लम्बे और १/३ से सवा इंच चौड़े होते हैं। पत्तियों को मसलने से विशिष्ट गन्ध आती है। पुष्प-छोटे गुच्छेदार और नील वर्ण होते हैं।फल-गोलाकार और पकने पर कृष्ण वर्ण के होते हैं। त्वचा-नीलाभ धूसर वर्ण की होती है।

नाम-निर्गुण्डी=निर्गुडति शरीरं रक्षति रोगेभ्य:-जो रोगों से शरीर की रक्षा करे। सम्हालु, मेउड़ी।लै० Vitex negundo. अं. Five-leaved chaste. जति-निधण्टुओं में दसकी नीलपुष्पी और श्वेतपुष्पी दो जातियाँ बतलाई गई हैं। नीलपुष्पी का नाम निर्गुण्डी तथा श्वेतपुष्पी का नाम सिन्दुवार (सिन्दुं शोथं वारयति इति सिन्दुवार:) दिया है।

गुण- रस-तिक्त,कटु,कषाय। गुण-लधु,रूक्ष।वीर्य-उष्ण। विपाक-कटु ।

दोषकर्म-उष्ण वीर्य होने से यह कफवात शमन है। सांस्थानिक बाह्य कर्म में यह वेदनास्थापन,शोथहर, व्रणशोधन,व्रणरोपण,केश्य और जन्तुघ्न है। आभ्यन्तर नाडीसंस्थान-वातनाशक होने से यह वेदनास्थापन तथा मेध्य हैं। यह तिक्त और उष्ण होने के कारण दीपन,आमपाचन,यकृदुत्तेजक और कृमिध्न है। कटुतिक्त होने के कारण यह कफनाशक और कासहर है। यह शरीर के समस्त संस्थानों को उत्तेजित करता है तथा बल्य और रसायन है। यह चक्षुष्य है तथा दृष्टिशक्ति को बढ़ाता हैं।

प्रयोग - इसका प्रयोग कफवातजन्य विकारों में करते हैं।

सांस्थानिक प्रयोग बाह्य-शिर:शूल,अंडकोष,संधिशोथ आदि शोथवेदनाप्रधान रोगों में इसके पत्रों को गर्म करके बॉधते हें या उसका उपनाह (पोल्टिस) देते हैं। गर्भाशयशोथ,पश्वाशयशूल,वृषणशोथ और गुदशोथ आदि में इसके क्वाथ से कटिस्नान कराते हैं। कण्ठशूल और मुखपाक में इसके क्वाथ का गंडूष (कुल्ला) कराते हैं। शुष्कपत्रों के धूपन से शरि:शूल तथा प्रतिष्याय शान्त होता है। इससे सिद्ध तैल का प्रयोग व्रणों में और पालित्य रोग मे भीं करते हैं।

सिन्दुवार+एरण्डपत्र+वशमूल और नारायणतैल के क्वाथ के वाष्प के सर्वागस्वेदन सिरबाहर वाले बक्से में बन्द करके देने से सर्वसन्धिशूल+आमवात तथा गृध्रसी में लाभ होता है।

प्रयोज्यांग अंग -पत्र,मूल और बींज। मात्रा -पत्रस्वरस-२-५ मि.लि.। मूलचूर्ण -१-३ ग्राम। बीजचूर्ण-५-१२र०।

विशिष्ट योग- निर्गुण्डी कल्प+निर्गुण्डी तैल।

अहितकर प्रभाव- इसके अतियोग से दाह आदि पैत्तिक विकार उत्पन्न होते हैं।

निवारण-इसके अहितकर प्रभावों के निवारण के लिये बबूल की गोंद और कतीरा का प्रयोग करते हैं।

निर्गुण्डी कटुतिक्तोष्णा कृमिकुष्ठरुजापहा।
वातश्लेष्मप्रशमनीद प्लीहगुल्मारुचीर्जयेत्।।

(ध.नि.)

-गुरुकुल पौन्धा, देहरादून

स्वामी दयानन्द एक महान् व्यक्तित्व

-शिवदेव आर्य

इतिहास साक्षी है कि जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं से संवेदनशील व्यक्तियों के जीवन की दिशा बदल जाती है। हम प्रतिदिन रोगी, वृद्ध और मृत व्यक्तियों को देखते हैं। हमारे हृदय पर इसका कुछ ही प्रभाव होता है, परन्तु ऐसी घटनाओं को देखकर महात्मा बुद्ध को वैराग्य हुआ। पेड़ों से फलों को धरती पर गिरते हुए किसने नहीं देखा, परन्तु न्यूटन ही ऐसा व्यक्ति था जिसने इसके पीछे छिपे कारण को समझा और 'गुरुत्वाकर्षण' के नियम का आविष्कार किया और प्रतिदिन कितने शिव भक्तों ने शिव मन्दिर में शिव की पिंडी पर मिष्ठान्न का भोग लगाते मूषकों को देखा होगा, परन्तु केवल ऋषिवर दयानन्द के ही मन में यह जिज्ञासाजागृत हुई कि क्या यही वह सर्वशक्तिमान्, सच्चे महादेव हैं। जो अपने भोजन की रक्षा भी नहीं कर सकते हैं। इस घटना से प्रेरणा लेकर किशोर मूलशंकर सच्चे शिव की खोज के लिए अपनी प्यारी माँ और पिता को छोड़कर घर से निकल पड़े।

मूलशंकर सच्चे शिव की खोज में नर्मदा के घने वनों, योगियों-मुनियों के आश्रमों, पर्वत, निर्झर, गिरिकन्दराओं में भटकता रहा। अलखनन्दा के हिमखण्डों से क्षतविक्षत होकर वह मरणासन्न तक हो गया परन्तु उसने अपने लक्ष्य को पाने का प्रयास नहीं छोड़ा। चौबीस वर्ष की आयु में पूर्णानन्द सरस्वती से संन्यास की दीक्षा लेकर मूलशंकर दयानन्द बन गए। अन्ततः इन्ही प्रेरणा से वे प्रज्ञाचक्षु दण्डी विरजानन्द के पास पहुँचे और तीन वर्ष तक श्री चरणों में ज्ञानाग्नि में तपकर गुरु की प्रेरणा से मानवमात्र के कल्याण एवं वेदों के उद्धार के लिए तथा अज्ञान-अन्धकार और समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने के लिए कार्यक्षेत्र में उतर पड़े। उस समय भारत में मुगल साम्राज्य का सूर्य अस्त हो गया था। और अंग्रेजों का आधिपत्य सम्पूर्ण भारत पर हो चला था। स्वामी दयानन्द इस विदेशी प्रभुत्व से अत्यधिक क्षुब्ध थे। जिसकी अभिव्यक्ति सत्यार्थ प्रकाश के अष्टम समुल्लास में हुई। उन्होंने लिखा कि देश के लोग निष्क्रियता और प्रमाद से ग्रस्त हैं। लोगों में परस्पर विरोध व्याप्त है और विदेशियों ने हमारे देश को गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ है इसलिए देशवासियों को अनेक प्रकार के दुःख भोगने पड़ रहे हैं। यह ऐसा समय था जब देश मे सर्वत्र अज्ञान का अन्धकार व्याप्त था। जनमानस अन्धविश्वासों और कुरीतियों से ग्रस्त था। अंग्रेजी शासकों ने भारतीय सभ्यता और संस्कृति को समाप्त करने के लिए मैकाले की शिक्षानीति को लागू कर भारतवासियों में हीन भावना का संचार कर दिया था। निराश देशवासी पश्चिमी राष्ट्रों की भौतिक समृद्धि की चकाचौंध से प्रभावित होकर अपने गौरवशाली, अतीत, धर्म, संस्कृति और जीवन के नैतिक मूल्यों से विमुख हो रहे थे। इसलिए उन्हें पाश्चात्य जीवन प्रणाली के अनुकरण में ही अपना हित मालूम होता था। ऐसी विकट परिस्थितियों में महर्षि ने आर्य समाज की स्थापना करके जर्जर निष्प्राण हिन्दू समाज में प्राण फूंकने का उसकी धार्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना को उद्बुद्ध करने का प्रयास किया। नारी जाति की दुर्दशा को देखकर उनमें शिक्षा का प्रसार करने तथा अछूतों को हिन्दू समाज की मुख्यधारा में लाने और इस्लाम एवं ईसाइयत में हिन्दुओं के धर्मान्तरण को रोकने का महत्वपूर्ण कार्य किया। ऋषि के जीवन का मुख्य उद्देश्य वेदों का उद्धार और उसका प्रचार-प्रसार करना था उनका कहना था कि वेद ज्ञान भारत तक ही सीमित न रहे अपितु सम्पूर्ण विश्व में उसका प्रचार हो। उनका कहना था कि वेदों का ज्ञान किसी एक धर्म, जाति, सम्प्रदाय या देश के लिए नहीं है अपितु सम्पूर्ण मानव जाति के कल्याण के लिए है। इसीलिए उन्होंने "**कृण्वन्तो विश्वमार्यम्**" अर्थात् सम्पूर्ण विश्व को श्रेष्ठ बनाने का सन्देश दिया है हमें उनके जीवन से प्रेरणा लेनी चाहिए।

दीपावली के इस पवित्र अवसर पर वे अपने भौतिक शरीर को छोड़ परलोक सुधार गये थे तभी से यह धरा आज पर्यन्त उनकी पूर्ति नहीं कर पायी है। आओं! हम सब मिलकर उनके द्वारा दर्शाये मार्ग का अनुगमन कर सच्ची श्रद्धांजली समर्पित करें।

-गुरुकुल पौंधा, देहरादून

राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर बालक प्रज्ञा द्वारा बहस शुरू

❑ **मानसिंह रावत**

'द पाइनियर नेशलन एकैडमी' शहर में हाल में ही स्थापित अंग्रेजी माध्यम का पब्लिक स्कूल है। वहाँ विद्यालय के अन्दर केवल अंग्रेजी में ही बात करना अनिवार्य है।

पिछले साल सातवीं की वार्षिक परीक्षा में जो बच्चे अंग्रेजी में सर्वाधिक अंक लाये हैं वे दोनों पहले साल कक्षा ६ की परीक्षा में बहुत कमजोर थे। दोनों निकटवर्ती गाँव से आते हैं। अंग्रेजी शिक्षक बताते थे कि कक्षा में भी उनकी प्रगति अच्छी नहीं है। दोनों से पूछने पर उन्होंने बताया कि वे गाँव में श्री चन्द्रप्रकाश जी से ट्यूशन पढ़ते हैं। उनका पढ़ाना एकदम समझ में आता है।

प्रधानाचार्य जी चन्द्रप्रकाश से सम्पर्क कर उनसे बहुत प्रभावित हुए और उन्हें अपने विद्यालय में नियुक्ति दिला दी। चन्द्रप्रकाश एक साधारण परिवार के सरल व हँसमुख स्वभाव के युवक हैं। पिता की मृत्यु के बाद कठिन आर्थिक स्थिति में एम.ए. करने के बाद दो साल तक नौकरी की तलाश में भटकने के बाद अपने गाँव में ही ट्यूशन का काम शुरू किया। बी.एड. न होना विद्यालयों में नियुक्ति की मुख्य बाधा रही है।

वास्तव में शिक्षक का अपने विचारों को समझाना, अर्जित गुण कम, जन्मजात गुण अधिक है। उसके लिये आत्मीयता और सरलता मुख्य है। इसके अलावा चन्द्रप्रकाश में सेवा भावना और छोटा-बड़ा कार्य का विचार किये बिना किसी भी कार्य के लिये तत्परता के कारण वह **'द पाइनियर नेशनल एकैडमी'** में बहुत शीघ्र जनप्रिय हो गये। उन्हें कक्षा ६ के क्लास टीचर की जिम्मेदारी भी दी गयी जहाँ हर शनिवार को डिबेड का भी आयोजन होता है। उन्हें सुबह **'मस्टर'** के समय दो मिनट **'स्टुडेन्ट्स इन बीइंग'** पर प्रेरक वचन बोलने को भी कहा जाता था।विद्यालय का अनुशासन शिक्षकों में कर्तव्य भावना का पालन आदि से चन्द्र प्रकाश बहुत प्रभावित थे मगर अपने देश में अपनी मातृभाषा में बात करने में प्रतिबंध नियम का पालन करते हुये भी, उसके गले नहीं उतरती थी। शहर के कई लोगों से, अपने साथी शिक्षकों से भी इसकी चर्चा होती थी किन्तु 'विद्यालय नियम' होने से इसपर कोई कुछ बोलते नहीं थे।

विद्यालय वार्षिकोत्सव के अवसर पर कक्षा ६ का प्रज्ञा मोहन, जिसके पिता एक स्थानीय समाज सेवा संस्था के अध्यक्ष थे, का अंग्रेजी भाषण रखा गया था। भाषण प्रारम्भ करते हुये। उस नन्हे बच्चे के मुख से गम्भीर मुद्रा में 'Respected Audience' निकलते ही खुब तालियों से स्वागत हुआ। उसने आगे कहा-

'My name is Pragyan. I am a Student of class VI of the PNA. I am proud of my school and of my country . but i feel sorry that even being a great nation. my country has no National Language and so our guardians like us to be educated through foreign English language only. The father of our nation had said, A nation has no existance without its National Language.

May God help us.भाषण के बाद जोर से मगर बहुत कम तालियां बजी।वार्षिकोत्सव का कार्यक्रम काफी देर तक चला मगर इस छोटे बच्चे के छोटे से भाषण ने उपस्थित जनों में भिन्न प्रकार की और विद्यालय के छात्र-छात्राओं व स्टाफ में भिन्न प्रकार की खलबली पैदा कर दी। अखबारों ने इसे खूब उछाला। अनुमान लगाते रहे कि अध्यापक चन्द्रप्रकाश की ओर से या प्रज्ञा के पिता की ओर से भाषण तैय्यार किया गया है। पूछने पर प्रज्ञा ने बताया कि स्वामी दयानन्द के **'सत्यार्थ प्रकाश'** और गाँधी जी की **'आत्मकथा'** से मुझे

प्रेरणा मिली है। शहर में बहुत समय तक चर्चा चलती रही और विचार मंथन शुरू हुआ। इस बात से सब सहमत थे कि अंग्रेजी मीडियम वाले स्कूलों का अनुशासन अच्छा है, और पढ़ाई का स्तर भी अच्छा है, मगर ये बच्चे राष्ट्रीयता से कटकर व्यक्तिवादी व भौतिकवादी बनते है। तो पढ़ाई का स्तर क्या यह अंग्रेजी भाषा के कारण है या व्यवस्था व पैसों के कारण है? क्या राष्ट्रभाषा के माध्यम से उससे भी बेहतर अनुशासन और पढ़ाई का स्तर नहीं बन सकता?

उस होनहार नन्हे बालक प्रज्ञा मोहन ने अपने विद्यालय के वार्षिकोत्सव के अवसर पर राष्ट्र की उपेक्षित राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर बहस शुरू कर दी है, निर्णय राष्ट्र को करना है।

-सर्वोदय सेवक, कोटद्वार

निमन्त्रण-पत्र

आप सभी को यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता होगी कि आर्यों का तीर्थस्थल ११९ गुरुकुल गौतमनगर नई दिल्ली-४९ का ८० वॉ वार्षिकोत्सव एवं ३४ वॉ चतुर्वेद ब्रह्मपारायण महायज्ञ **२५ नवम्बर सोमवार** से **२२ दिसम्बर रविवार २०१३** तक पूर्व वर्षों की भान्ति विभिन्न भव्य सम्मेलनों के साथ सम्पन्न होगा। चतुर्वेद ब्रह्मपारायण महायज्ञ के ब्रह्मा वेदों के प्रकाण्ड पण्डित गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के पूर्व आचार्य **डॉ. वेदप्रकाश जी** (हरिद्वार) यज्ञ के ब्रह्मा होंगे । महायज्ञ में आर्य जगत् के उच्चकोटि के विद्वान्, सन्यासी भजनोपदेशक पधाार रहे हैं। इस अवसर पर आप स्वयं यजमान बनकर दूसरों को प्रेरित कर पूण्य के भागी बनें तथा यज्ञ में दान देकर गुरुकुल की सहायता कर कृतार्थ करें। आपके द्वारा दिया गया दान ८० जी के अन्तर्गत छूट प्रदान की जायेगी।

आप सभी अपने इष्ट मित्रों एवं परिवार वालों के साथ पधार कर धर्म लाभ प्राप्त करें।

निवेदक:-

स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती

एवं समस्त अधिकारी व सदस्य, वेदार्ष-न्यास

website: www.pranwanand.org

अथ श्री ओमानन्द लहरी

– **आचार्य यज्ञवीर व्याकरणाचार्य**

पुरोवाक्

अयि मान्या सहृदयहृदया:!

पण्डितजगन्नाथ विरचिता अद्भुता कृति तत्रभवद्भि: किं नादर्शि? जड़जलप्रवाहमुद्दिश्य या च कृता सा अद्यत्वे यत्र तत्र कस्मिंश्चित् पुस्तकालये दरीदृश्यते। सा तत्वत: सत्याऽसत्या वेति विचारणे तु तत्र भवन्तो विद्वांस: स्वयमेव प्रमाण भूता:। पण्डितवर्याणामखिलानन्दशर्मणाम्मते तु केवलजडजलप्रवाहमय्या गङ्गायास्तादृशी लोकोत्तरावर्णना व्यर्थेव प्रतिभाति अभावात्तत्र तादृशशक्तेरिति।

चेतनधर्माणां जडधर्मवति जले समारोपात् तत्रत्या सर्वेऽपि श्लोकानानादोषैर्दूषिता दरीदृश्यन्ते यतो हि कर्मादिनामेव तत्तत्फलाद्यायकत्वाद् बन्धनमोक्षप्रदायकत्वाच्च शक्तिमहत्वं प्रसिद्ध्यति न तु गङ्गादिजडजलमयप्रवाहाणां शक्तिमत्वम्। एतत्सर्वदर्शदर्शमेव कविरत्नाखिलानन्दशर्मणा ''श्रीदयानन्दलहरी'' महर्षीणां श्रीदयानन्दसरस्वतीस्वामिवर्याणां सकलगुणवर्णनपरा निगमागमसम्मतमतप्रतिपादिका सर्व लोकोपकारपरालोकोत्तररम्यरचना विरच्य नीरक्षीरविवेकिनां हंसानां हस्तगता विहिता सा चोपस्थितसमये सर्वजनेष्टानां श्रेष्ठानां विदुषामन्दानन्दायिनी वरीवर्ति।

१९०५ पश्चात् १९२५ तमे खीस्ताब्दे मथुरायां समायोजितायां ''दयानन्दजन्मशताब्दौ कार्यवाहकाध्यक्षपदम् अलं कुर्वता श्रीमता नारायणस्वामिना आर्यकुलमणिमेधाव्रतकविरत्नस्य सविधे पत्रमेकं प्रहितम्– शताब्दिपरिषदा निर्णीतं यत् गुरुवरदयानन्दसम्बन्धिभक्तिमयं काव्यमेकं प्रकाश्य तदवसरे उपायनीकर्तव्यमिति। तत् काव्यं च गङ्गालहरी काव्यवत् संस्कृतभाषायां स्यात्। आज्ञां गुरुणां शिरोधार्या कृत्वा कविरत्नस्य लेखनी गुरो: गुणगौरवं गीर्वाणगिरा वर्णयति स्म। कविना यदा दयानन्दलहरीनिर्माय काव्यकोविदानां कर्ण गोचरी कृता तदा तां पाठं पाठं पुस्तिकां सूक्ष्मेक्षीणां समीक्षकाणां मनांसि प्रमोदभरितानि बभूवु:। अनयो: कविरत्नयो: दयानन्दलहरी मयापि बाल्ये स्वाध्यायपरम्परया स्वयमेव गीता न तु अवगता परं भारतराजधान्यां दिल्यामायोजिते (२५-२८ अक्टूबर २०१२) अन्ताराष्ट्रियार्यमहासम्मेलने श्रीमन्त आचार्या: बलदेवमहाभागा: आदिशन् यत् यज्ञवीरस्त्वया गुरोरानृण्यार्थं दयानन्द लहरीवत् – ''ओमानन्दलहरी'' लेख्या इति। परन्तु आज्ञा गुरुणां ह्यविचारणीय इति मत्वा तेषामादेशं स्मारं स्मारं स्वप्नेऽपि अहं भयभीतोऽभवम्। कथमहमिदं दुस्तरं काव्यं कर्तु पारये? मन्दकवि: यश: प्रार्थी गमिष्यामि उपहास्यतामिति। पुनश्चाहं परमपितरं परेशं ध्यायं ध्यायं ध्यानावस्थिततद्गतेनमनसाचिन्तयं तदा मनसि मेऽनवद्यं हृद्यं पद्यं प्रस्तुतम्–

न विद्यते यद्यपि पूर्ववासना,
गुणानुबन्धिप्रतिभानमद् भुतम्।
श्रुतेन यत्नेन च वागुपासिता,
ध्रुवं करोत्येव कमप्यनुग्रहम्।।

अनेनप्राप्तोत्साह: आचार्यादेशं मन्यमान: ओमानन्दलहरी निर्माणाय कृतनिश्चय: सततप्रयत्नशीलोऽभवम्। पूर्ववर्णितयो: कविरत्नयो: काव्यारामे प्रविश्य तत्र काव्यकल्पतरौ विकसित पुष्पेभ्य: वर्णपदालंकाररूपरसमादाय मधुमक्षिकेव काव्यमध्वास्वादयन् स्वकाव्यमधुकोषसंचये च संलग्न:। तयो: कविरत्नयो: खलु सारस्वतपुत्रोऽहं तदङ्गुलीग्रहणपुरस्सरं काव्यपथसंचलनप्रशिक्षुबाल इव क्षन्तव्य:। अस्मिन् पद्यात्मके लघुकाव्ये यद् रुचिकरं शोभनं सुन्दरं शिवं वा तत् तत् भवादृशानां विद्वद्धौरेयाणां गुरुवर्याणाम्, तेषां पूज्यतमानां स्वामिवर्याणामोमानन्दानां तयोश्च कविरत्नयो र्मेधाव्रताखिलानन्दयोरेव यच्चावद्यं

तद्मदीयं मत्वा अनुगृह्णन्तु तत्र भवन्तो विद्वद्वरेण्या इति।

विद्वच्चरणचञ्चरीकः

आचार्यो यज्ञवीरः

आभासः अव् धातोः रक्षणादिकार्थस्य सम्पन्नस्य ओम् शब्दस्य स्मरणं सर्वप्रथमं क्रियते यतो हि सर्वेशस्य परमेश्वरस्य मुख्यमेवास्ति निजनाम तत्। ओमानन्दलहरीत्याख्यस्य काव्यस्यादौ **''ओम्''** इत्यक्षरं प्रयुञ्जानश्चराचरस्य जगतो निमित्तकारणं ब्रह्मध्यायामि नमामि च। ततश्च मङ्गलकरमाचार्य स्वगुरुवर्यमोमानन्दं प्रणमामि मङ्गलार्थम्। यतो हि महाभाष्यकारेण पतञ्जलिनोक्तम्-**''मङ्गलादीनि हि शास्त्राणि प्रथन्ते वीरपुरुषकाणि च भवन्ति, आयुष्मत्पुरुषकाणि चाध्येतारश्च सिद्धार्था यथा स्युरिति''** महाभाष्ये पस्पशाह्निके।

ओमक्षरम्सकलमङ्गलदायकं कम्,
शम्भुस्वयम्भुविभुनित्यमहेश्वरं खम्।
नारायणं निगमज्ञानप्रदायकं तम्,
आचार्यमङ्गलकरञ्च नमामि नित्यम्।।१।।

व्याख्याः ओम्=जगद्रक्षकम्, अक्षरम्=न क्षरति इत्यक्षरम् सकलमङ्गलदायकम्=सम्पूर्णाय संसाराय माङ्गल्यं प्रयच्छति यस्तम्, कम्=क इति प्रजापतिः नामधेयम् तं, सुखस्वरूपं 'क इति सुख नाम' तम् शम्भुस्वयम्भुविभुनित्यमहेश्वरम्= कल्याणकारकमानन्द-दायकं, स्वतो विद्यमानं जन्मरहितं, सर्वव्यापकं सर्वकालेषु वर्तमानं महदैश्वर्यसमन्नं खम्=आकाशवत् सर्वत्र व्यापकं, नारायणम्=नारा अयनं यस्य (बहुव्रीहि समास) तस्यैव भगवतोनाम-

आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः।
ता यदायतनं पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः।।
(मनु.-१.१०)

निगमज्ञानप्रदायकम्=सर्गादौ वेदज्ञानप्रदातारम्, **'आम्रायो निगमो वेद'** इति कोशे। अत्र प्रमाणम्-**'तस्माद् यज्ञात् सर्वहुतः ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दांसि जज्ञिरे तस्मात् यजुस्तस्मादजायत।। (यजुर्वेद-३१.७)**

तम्=प्रभुमहम् नित्यम् नौमि तथा च - आचार्यमङ्गलकरम्=मङ्गलङ्करोतीति मङ्गलकरस्तम् **'आचार्यः' 'आचारं ग्राहयति, आचिनोति अर्थान् आचिनोति बुद्धिमिति वा'** निरुक्त। तथा भूतं तं आचार्यम् सर्वदा नमामि, नित्यम्=सदैव प्रणमामि ईश्वरमाचार्यञ्च इति दिक्। मन्त्रव्याख्याकृदचार्यः इत्यमरः अन्यच्च-

उपनीयतुयः शिष्यं वेदमध्यापयेद्द्विजः।
संकल्पं सरहृस्यं च तमाचार्यं प्रचक्षते।।
(मनुस्मृति-२.१४०)

आर्यभाषाः क्षरण न होने वाले, सर्वविधमङ्गलप्रदान करने वाले, कल्याणकारी, स्वतोविद्यमान, अजन्मा, सर्वव्यापक, महान् ऐश्वर्यवान्, सुखदायक, नारायण, वेदविज्ञान देने वाले उस ओङ्कारेश्वर को और कल्याण करने वाले आचार्य को मैं नित्यप्रति नमन करता हूँ।।१।।

छन्द : वसन्ततिलका छन्द है लक्षण निम्नलिखित है-**'उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ ग्।'**

आभासः परमकल्याणीं गुरुपरम्परया वेदवेदाङ्ग-पारगादाचार्यात् दयानन्दात् प्राप्य जगत्कल्याणाय वेदज्ञानप्रसारकस्य ओमानन्दस्य सरस्वत्याः गौरवं वर्ण्यते-

अनन्तादानन्दान्निगमकथितौङ्कारवदनात्,
प्रसूता कल्याणी सुविमलतमा वाक् सुफलदा।
दयानन्दाल्लब्ध्वा सकलजगते यो वितरति,
जयत्योमानन्दो जनकुलकृते मङ्गलकरः।।२।।

व्याख्याः न विद्यते अन्तं यस्य सः, तस्मात् ब्रह्मणः आनन्दात्। मुत्प्रीति प्रमदो हर्ष प्रमोदामोदसम्मदाः, आनन्दथुरानन्दः शर्मशातसुखानि च (अमरकोषः-१.४.२५) अनन्तात् सुखभूतात् आनन्दस्वरुपात् निगमकथितौङ्कारवदनात्=वेदोक्त परब्रह्मणो मुखात् आम्नायः निगमो वेदः 'इति कोशः' वक्त्रमास्ये वदनं तुण्डमाननं लपनं मुखम् (इत्यमरकोषे २.५.८९) कल्याणी=भद्रकारिणी, आनन्दकारिणी विमलतमा=पवित्रतमा, वाक्=वाणी प्रसूता=प्रादुर्भूता, अग्निवायुरविअथर्वऋषीणामन्तः करणे प्रकटीभूता, दैवी वाक् इति सुफलदा=शोभनानां फलानां दात्री। ताम् वैदिकीं

वार्णी महर्षेः दयानन्दात् गुरुपरम्परया, लब्ध्वा=प्राप्य ज्ञात्वा इत्यभिप्रायः यः=ओमानन्दः, सकलजगते=समस्ताय संसाराय वितरति=ददाति, विस्तारति स ओमानन्दः जनकुलकृते=मनुष्यसमाजाय मंगलकरः कल्याणकारी (सन्) जयति= विजयमेति। **'ब्राह्मी तु भारती भाषा गीर्वाग्वाणी सरस्वती। व्याहारः उक्तिर्लपितं भाषितं वचनं वचः।'**

(अमरकोषः १.५.१)

आर्यभाषा : वेदों में वर्णित अनन्त आनन्दस्वरुप ओङ्कारेश्वर के मुख से सुन्दर फल देने वाली, अत्यन्त पवित्रतम कल्याणकारिणी वेद वाणी, उत्पन्न हुई। गुरुपरम्परा से स्वामी दयानन्द से प्राप्त की हुई, जनसमाज के लिए कल्याण करने वाला जो ओमानन्द उस वेदवाणी को सम्पूर्ण संसार के लिए बाँटता है, वह श्री ओमानन्द विजय को प्राप्त होता है।

छन्द : शिखरिणी छन्द है, जो कि ५० वें श्लोक पर्यन्त रहेगा। उसका लक्षण निम्निलिखित है-

'य्मौ न्सौ भ्लौ गर्तुरुद्राः' इति पिंगलछन्दशास्त्र ७.२०।।२।।

आभासः स्वामिवर्यस्य श्रीमतः ओमानन्दस्य जन्मादिविषयकं वर्णनमत्र क्रियते-

अभूदेकः सिंहो जगति भगवानादिरभिधः,
नरेलाख्ये ग्रामे कनकसदने वै शिशुरयम्।
जनिं लेभे दिल्ल्यां विमलमतियुक्तोऽतिचतुरः,
कलेवेन्दोर्भानुः स्वकुलजनमोदाय ववृधे।।३।।

व्याख्याः दिल्ल्याम्=भारतवर्षस्य राजधान्यां दिल्ली इत्याख्यायां नरेलाख्ये=नरेलानामके ग्रामे, **'समौ संवसथ ग्रामौ'** इत्यमरकोषे (२.२.१९) कनकसदने=श्रीमतः कनकसिंह इत्याख्यस्य जनस्य गृहे (सद्+ल्युट् प्रत्यये), कनकस्य सदनं कनकसदनं तस्मिन् (षष्ठी तत्पुरुषः) भगवानादिरभिधः=भगवान् इत्येतत् पदं यस्य अभिधायां विद्यते आदिः स सिंहः=नरयाघ्रः, जगति=अस्मिन् संसारे अभूत्=अजायत भगवान् सिंह इत्यभिधानः, वै=निश्चयेन अयम् शिशुः=एषः बालकः (शिशुः शो+कु सन्वद् भावे द्वित्वे च) जनिम्=जन्म लेभे='अलभत' जनुर्जननजन्मानिजनिरुत्पत्ति रुद् भवः'(इत्यमरः १.४.३०)। अयम्=एष भगवान्सिंहनामकः, विमलमतियुक्तः=मलरहितया बुद्ध्या युक्तः, अति चतुरः अत्यन्तश्चतुरःनिपुणः, स्वकुलजनमोदाय= स्वकीयपारिवारिक जनानां मोदः, स्वकुलजनमोदः तस्मै, षष्ठी तत्पुरुष। कलेवेन्दोर्भानुः=कला इव चन्द्रमसः अयं भानुः बाल्यकालस्य भानुरित्युपनान्मा प्रसिद्धः ववृधे = वृद्धिमवाप इति। अत्र उपमालंकारः। इन्दु-**'हिमांशुश्चन्द्रमाचन्दइन्दुः-कुमुदबान्धवः'** इत्यमर-१.३.१३। 'कला तु षोडशो भागः' इत्यमरः-१.३.१५।

आर्यभाषाः भारतवर्ष की राजधानी दिल्ली में नरेला नामक ग्राम में , श्री कनकसिंह के घर में, भगवान् पद जिसके नाम में आदि पद है, ऐसा सिंह, नरव्याघ्र बालक उत्पन्न हुआ, यह भगवान्सिंह शुद्धबुद्धिसम्पन्न बालक था, अपने पारिवारिकजनों की प्रसन्नता के लिए बाल्यकालीन भानु उपनाम से प्रसिद्ध यह बालक चन्द्रमा की कला की भाँति उत्तरोत्तर बढता गया।

आभासः नरव्याघ्रस्य भगवान्सिंहाख्यस्य भानुरुपनाम्ना प्रसिद्धस्य शिशोर्जन्मनि के के धन्या इत्येतत् वर्णयन्नाह-

सती नान्ही धन्या भवविभवयुक्तस्य जननी,
पिताऽसौ धन्योऽभूद्भुवि भगवदाराधनरतः।
प्रदायेमं पुत्रं श्रुतिपथजुषं वैदिकयतिम्,
नरेलाभूर्धन्या यतिपतिरयं यत्र ववृधे।।४।।

व्याख्या : भवविभवयुक्तस्य=सांसारिक धन-धान्य संयुक्तस्य सर्वतो समृद्धस्येति भावः (भवस्य विभव=भवविभवः भवविभवेन यः युक्तः स भवविभवयुक्ततत्पुरुषगर्भितबहुब्रीहिः) जननी=जन्मदात्री, नान्ही=इत्याख्याशोभिता माता, सती=सद्वृत्ता, सदाचारिणी धन्या-धन्या भूता, भुवि=पृथिव्याम् भगवदाराधानरतः =ईश्वरोपासनायां संलग्नः, असौः अयं पिता= पालयिता, रक्षयिता, भरणपोषणाकर्ता, तातस्तु जनकः पिता (इत्यमरः१.५.२८) यः एतादृशं श्रुतिपथतजुषम्=वेदमार्गसेविनं वैदिकयतिम्= श्रौतसन्यासिनं पुत्रम्=तनयम् पुंनरकः ततस्त्रायत इति पुत्रः

(इति निरुक्ते यास्कः) 'आत्मजस्तनयसूनु सुतः पुत्रः' (इत्यमरः२.५.२७) (देशाय) प्रदाय=समर्प्य धन्यः=कृतकृत्यः, अभूत्=अजायत, यत्र=यस्मिन् स्थाने अयम्=एषः यतिपति=संन्यासिवर्यः ववृधे=वृद्धिमवाप सा नरेलाभूः=नरेलानामकस्य ग्रामस्य भूमिर्धन्याः=कृतकृत्या, धन्या भूता वर्तते। '**भूर्भूमिरचलाऽनन्ता रसा विश्वंभरा स्थिरा**'। पृथिव्याः २७ नामानि.....अमरकोषे १.२.२।।

आर्यभाषाः सांसारिकं धनधान्य से समृद्ध पुत्र की जन्मदात्री सदाचारिणी सती माता नान्ही देवी सर्वप्रथम धन्य हुई, पृथिवी पर ईश्वरोपसना में संलग्न पिता श्री कनक सिंह ऐसा वेदमार्गगामी वैदिक सेवाव्रती संन्यासी पुत्ररत्न देश को प्रदान करके धन्य हो गया, तथा जिस स्थान पर यह भावी श्रेष्ठ सन्यासी बढा, पला बड़ा हुआ उस नरेला गाँव की धरा भी धन्य हो गयी।।४।।

आभासः पूज्यगुरुवर्यस्य, स्वामिवर्यस्यौमानन्दस्य गुणवैशिष्ट्यमाचष्टे-

सुधीः साधुर्ज्ञानी निखिलगुणधामा यतिवरः,
जनानां सौभाग्याद्विदितगुणग्रामो मुनिवरः।
प्रदीपो विद्यानां निबिडतमसो वारणरतः,
जयत्योमानन्दः सकलविधपाखण्डदलनः।।५।।

व्याख्याः सुधीः=शोभना धीर्यस्य स सुबुद्धिः श्रेष्ठो बुद्धिमान् इत्यभिप्रायः, साधुः=सज्जनः, उत्तमः, पुण्यात्मा,ज्ञानी=विज्ञः, ज्ञानवान् 'ज्ञानी मत्वर्थेऽत्र अत इनिठनौ ५.२.११५ सूत्रेण इनि प्रत्यये कृते ज्ञानी' निखिलगुणधामा=निखिलाश्च ते गुणाः निखिलगुणाः निखिलगुणानां यः धामन् स निखिलगुणधामा सर्वगुणगृहमित्यर्थ यतिवरः=यतिषु यतीनां वा वर यतिवरः श्रेष्ठसंन्यासी इत्यभिप्रायः, विदितगुणग्रामः=विदिताश्चते गुणाः विदितगुणाः विदित गुणानां ग्रामः=विदितगुणग्रामः प्रसिद्ध गुणसमूह इत्यभिप्रायः ग्रामः समुच्चयः संग्रह गुणग्राम इन्द्रियग्रामः स्वरग्राम इत्यादिवत् 'शब्दादि पूर्वो वृन्देऽपि ग्रामः' (इत्यमर ३.३.१४१) मुनिवरः=मुनिश्रेष्ठः मुनिषु मुनीनां वा वरः मुनिवरः 'स्थित धीर्मुनिरुच्यते' वर (वृ+अप् कर्मणि प्रत्यये कृते) व्रियत इति वरः' 'तपोभिरिष्यतु यस्तु देवेभ्यः स वरो मतः' प्रदीपः=प्रकाशकः दीपकः विद्यानाम्=वेदात् प्रार्दूभूतानां सर्व विधज्ञानानां निबिडतमसः=सघनान्धकारस्य, निवारणरतः=वारणे निवारणे अपहरणे रतः संलग्नः सकलविधपाखण्डदलनः= सर्वप्रकारस्य पाखण्डस्य नाशकः 'पाखण्ड=पातीति पाः इत्यत्र कर्तरिक्विप् तं पां खण्डयतीति पाखण्डः' पालनात् च त्रयी धर्मः पा शब्देन निगद्यते। तं खण्डयति स यस्मात् पाखण्डस्तेन हेतुना तम् पाखण्डं दलयतीति पाखण्डदलनः' नन्दिग्रहिपचादिभ्योल्युणिन्यचः इति कर्तरि ल्युः कृते दलनः इति।

ओमानन्दः=एतन्नामको गुरुवर्यः जनानाम्=मनुष्याणां सौभाग्यात्=सुभगायाः सुभगस्य वा भावः सौभाग्यं तस्मात् (ष्यञ् प्रत्यये कृते द्विपदवृद्धिः) सौभाग्यशालितायाः इति यावत् जयति=जयमाप्नोति।

आर्यभाषाः शुद्धबुद्धि, श्रेष्ठ, पुण्यात्मा, संन्यासिवर्य, सर्वगुणसम्पन्न, प्रसिद्ध गुणविभूषित, मुनिवर वेदों के ज्ञान-विज्ञान के प्रकाशक, सघन अन्धकार को नष्ट करने में सन्नद्ध सर्वविध पाखण्ड खण्डन करने वाले स्वामी ओमान्दन लोगों के सौभाग्य से विजय प्राप्त करता है।।५।।

आभासः स्वामिन ओमानन्दस्य जीवनादर्श दर्शयन्नुपक्रमते-

यदीया आदर्शाः प्रियभगतसिंहाः समभवन्,
यदा तेषां कारागृहगमनवार्ताः समशृणोत् ।
पुनर्मृत्योर्दण्डं व्यथितमनसा हा! अवगतम्,
ततः कालादेवातिदमनशमायैव यतितम्।।५।।

व्याख्याः यदीया=येषाम् आदर्शाः+प्रतिकृतयः, प्रकाराः ('आदर्शः शिक्षितानाम्' मृच्छकटिकम् १.४८ इति यथा) तादृशोऽहमपि भवेयम् इति विचार्य जीवनादर्शाः, प्रियभगतसिंहाः=भगतसिंहाख्याः क्रान्तिकारिणः प्रियतमाः समभवन्=अजायन्त इति, यदा=यस्मिन् काले तेषाम्=प्रियाणां क्रान्तिकारिणां कारागृहगमनवार्ता= बन्दीगृहगमनस्य समाचारान् समशृणोत्=शुश्राव, श्रुतवान् हा=अतिकष्टं पुनः =तत् पश्चाच्च तेषां मृत्योर्दण्डम्= वधादेशात्मकं दण्डं व्यथिमनसा=दुःखितेन चेतसा 'चित्तं

तु चेतो हृदयं स्वान्तं हृन्मानसं मनः इति पर्यायाः अवगतम्=ज्ञातम् विदितं श्रुतं ततः=तस्मादेव कालादेव=समयात् अतिदमनशमाय=आंगलानां दमनकारिणीं नीतिं नाशयितुमेव यतितम्=प्रयत्नः विशेषः कृत इत्यभिप्रायः।

आर्यभाषा : जिसके जीवन का आदर्श प्रियवर भगतसिंह हुए, जब उनके जेल जाने की खबर सुनी और फिर खेद के साथ मृत्यु दण्ड की सजा का ज्ञान हुआ तभी से अपने आदर्श के अनुरुप कालिज छोड़ तत्काल दमनकारी अंग्रेजी शासन के विरुद्ध जुट गये।।५।।

आभासः दमनविरोधस्वरुपमेव २३ मार्च १९३१ तमे एव महाविद्यालयीयां शिक्षां परित्यज्यार्षविद्यां जग्राह समुद्घोषयच्च यत 'दासाः लिपिकाः नैव भविष्यामोऽन्यः पन्था विद्यतेऽस्माकम्' इति प्रस्तूयते-

विदेशीया शिक्षा परवशकरी नैव पठिता,
पुनश्चार्षीं विद्यां निगमगदितां तां सुमधुराम्।
दिदीक्षे राजेन्द्रादमलमतियुक्ताद् गुरुकुले,
प्रदेशे दिल्यां गौतमनगरभूते सुविदिते।।७।।

व्याख्याः तत प्रभृति, विदेशीया=विदेशे भवा आंगलदेशे भवा शिक्षा=अध्ययनं या शिक्षा खलु परवशकरी=परतन्त्रतरकर्त्रीशिक्षा सा नैवकदापि पठिता=अधीता, पुनश्च तत्पश्चाच्च प्रदेशे दिल्ल्याम्=दिल्ली प्रदेशे सुविदिते=प्रख्याते, प्रसिद्धे गौतमनगरे विद्यमाने गुरुकुले अतिविमलमतियुक्तात्=अतिपवित्रबुद्धिसंयुक्तात् राजेन्द्रात्=श्रीमत राजेन्द्रनाथमहाभागात् संन्यस्ताद् आचार्यसच्चिदानन्दात् दिदीक्षे=दीक्षितस्तथा निगमगदिताम् वेदैः कथितां वेदानुकूलामित्यभिप्रायः 'आम्नायो निगमो वेदः' तां सुमधुराम्=तां माधुर्यपूर्णाम् आर्षीम्=ऋषिणा प्रोक्ताम् विद्याम्=परामपरां च ब्रह्मचर्य दीक्षायां दीक्षितः पठितवान्, विदितवान् इति।

आर्यभाषाः उसके बाद विदेशी लार्ड मैकाले की दासवृत्ति की शिक्षा नहीं ग्रहण की, पुनश्च दिल्ली प्रदेश में सुप्रसिद्ध गुरुकुल गौतमनगर में पवित्र बुद्धि सम्पन्न श्री राजेन्द्रनाथाचार्य से (संन्यस्त स्वामी सच्चिदानन्द योगी) वेदानुकूल आर्षविद्या का अध्ययन किया तथा परा अपरा दोनों विद्याएँ प्राप्त की।।७।।

आभासः पुनः विद्याध्ययन क्रममेवाचष्टे-

अथेन्द्रप्रस्थीयो गुरुकुलपतिर्वेदविबुधः,
सुधी राजेन्द्राख्यो बुधवरजनोऽतीव निपुणः।
ततोऽधीत्यार्षीं तामतिविमलपाठ्यक्रमविधेः,
सुकल्याणीं विद्यां त इह निजशिष्येष्वबिभरुः।।८।।

व्याख्याः अथ=अधुना 'मंगलानन्तरारम्भप्रश्नकात्स्न्येऽथो अथ' आर्षविद्याध्ययनप्रारम्भे इन्द्रप्रस्थीयः=पाण्डवैः स्थापिते इन्द्रप्रस्थे भवः, गौतमनगरस्थितस्य गुरुकुलस्य कुलपतिः=कुलाधिपतिः संस्थापकश्च वेदविबुधः=वैदिकविद्वान्, सुधी=शुद्धबुद्धिः विद्वान् (२२ विद्वत् नामसु पठति अमरः-२-७-५,५) राजेन्द्राख्यः=श्री राजेन्दनाथ इत्यमिधः, बुधवरजनः=विद्वद्वरः श्रेष्ठो मानवः अतीव निपुणः=अत्यधिकः प्रवीण (आसीत् इति शेषः) अभवत् ततः =तस्मादाचार्यवर्यात् ताम्=तथोक्तां आर्षीम्=ऋषिणा प्रोक्तां, अतिविमलपा ढ्यक्रमविधिम्=अतीव पवित्रामार्षपाठ्यक्रमविधिम् अधीत्य=अध्ययनं कृत्वा, पठित्वा ते =ओमानन्दाख्या इह निजशिष्येषु=गुरुकुलझज्जरस्थस्वकीयशिष्येषु छात्रेषु ताम्=पूर्ववर्णितां, सुकल्याणीम्=सम्यक्तया कल्याणविधायिनीं विद्याम्=ज्ञाननिधिम् अबिभरुः=धारयितवन्तः, संक्रमितवन्तः सम्पेषितवन्त इत्यभिप्रायः। अबिभरुः=डुभृञ् धारण पोषणयोः लङ् लकारे प्रथमपुरुष बहुवचने रुपम्। भृ+झ तिङि कृते श्लु शपः श्लौ द्वित्वे भृञामित्=इत्वे कृते अभ्यासकार्ये ब्'बि+भृ+उस् (झेर्जुस्) सिजभ्यस्तविदिभ्यश्च कृते, गुणे रपरत्वे च अडागमे ससजुषो रुः इति रुत्वे कृते विसर्जनीये च कृते रुपम्=अबिभरुः।

आर्यभाषाः अब इन्द्रप्रस्थ में विद्यमान गौतमनगर में स्थित गुरुकुल के संस्थापक एवं कुलपति वैदिक विद्वान् विमल बुद्धि विद्वानों में श्रेष्ठजन श्री राजेन्द्रनाथ आचार्य हुए उनसे उस ऋषिकृत आर्षपाठविधिक्रम से पूर्ण विद्या पढ़कर उस कल्याणकारिणी आर्षपाठविधि क्रमागत विद्या

को ओमानन्द सरस्वती ने गुरुकुल झज्जरस्थ अपने शिष्यों में सम्प्रेषित किया अर्थात् पढ़ाया।।८।।

आभासः जगद्गुरुविरजानन्दस्य आर्षगुरुपरम्पराम् वर्णयन्नाह-

महातेजा दण्डी विविधगुणयुक्तो यतिवरः,
प्रकाशस्तस्याऽभूदुदय इति नामातिनिपुणः।
व्रती गङ्गादत्तोऽमलमतिरभूत्तस्य वशगः,
विनेयोऽभूच्चास्यातिसुसरलराजेन्द्र इति भोः।।९।।

व्याख्याः विविधगुणयुक्तः=अनेकैः धर्मयुक्तैः स्वाभावैः सुगुणैः संयुक्तः, यतिवर=सुमस्करी, सुसंन्यासिश्रेष्ठः, महातेजा=महान् तेजस्वी दण्डी=दण्डधारी संन्यासी 'अत इतिठनौ दण्डमस्य अस्ति इति मत्वर्थे इनिः' श्री विरजानन्दः अभूत्=अजायत दयानन्दस्यर्षेः सुहृत् सहपाठी तस्य=दण्डिनः शिष्यः अतिनिपुणः=अत्यन्त चतुरः उदय नामा=उदयप्रकाश नामकः अभूत्=अभवत् तस्य=उदयप्रकाशस्य वशगः=शिष्यः, आज्ञाकारी व्रती=व्रतपालकः ब्रह्मचारी 'व्रतमस्यास्तीति व्रती' 'ब्रह्मचारीव्रतीवर्णी' अमलमतिः='न मलममलम् नञ्' 'अमला मतिर्यस्य सः=अमलमतिः(बहुव्रीहि)' शुद्धबुद्धिः पवित्रबुद्धिः गंगादत्तः=एतन्नामधेयः अभूत्=अजायत। भो=अरे पाठक! तस्य गंगादत्तस्य विनेयः=शिष्यः, अतिसुसरलः=अतीव सुतराम् अवक्रः छलकपटादिदोष रहितः राजेन्द्र इति नामधेयः अभूत् अजायत।

आर्यभाषाः अनेक गुणों से युक्त, संन्यासिश्रेष्ठ, महान् तेजस्वी विरजानन्द दण्डी हुए हैं, उनका शिष्य उदयप्रकाश नाम का अत्यधिक चतुर हुआ तथा उनका अर्थात् उदयप्रकाश का शिष्य व्रतधारी ब्रह्मचारी पवित्र बुद्धि वाला गंगादत्त हुआ। हे पाठक! अत्यन्त सरल प्रकृति का राजेन्द्र नामक शिष्य हुआ है। जो श्री गंगादत्त का विनीत शिष्य था।।९।।

आभासः पूर्ववर्णितगुरुशिष्यपरम्परा विषयमधिकृत्य एव प्राह-

गुरूणां शिष्याणां सरलसरणी चात्र गदिता,
सुपारम्पर्येणात्यमलयशसामार्षविदुषाम्।
प्रगीता या रीतिः प्रखरतपसा सा विजयताम्,
दयानन्दस्यर्षेः प्रबलतरधारा प्रवहति।।१०।।

व्याख्याः दण्डिनः पश्चात् दयानन्दस्यर्षेः आर्षविदुषाम्=आर्षपाठविधिमाश्रित्याधीतविद्यानां विपश्चितां सुपारम्पर्येण=सुष्टुप्रकारेण गुरुशिष्यपरम्परामाध्यमेन, गुरुणाम्=शिक्षकाणामाचार्यवर्याणां शिष्याणाम्=विनीतानां विनेयाानाम्, अत्र अस्मिन् भारते अत्यमलयशसाम्=अतीव अमलं यशः येषां ते, तेषामतीवपवित्रयशभाजां विदुषां सरलसरणी=सरला पद्धतिः गदिता=उक्ता, कथिता, प्रगीता=श्लोकमाध्यमेन गीता सा=पूर्वोक्त रीतिः=सा आर्षप्रणाल्याः रीतिः या खलु प्रबलतरधारा=अत्यन्तवेगवती धारा, प्रवहति=प्रचलति, प्रकृष्टतया वहति, दयानन्दस्यर्षेः=ऋषेः दयानन्दस्य, प्रखरतपसा=प्रकृष्टेन तीव्रतरेण तपसा द्वन्द्वसहिष्णुत्वेन विजयताम्=विजयं प्राप्नोतु अत्र विपराभ्यां जेः (१.३.१९) सूत्रेण आत्मनेपदे कृते लोटः प्रथमपुरुषैकवचनविवक्षायां रुपं विजयतामिति।

आर्यभाषाः दण्डी जी के बाद ऋषिदयानन्द की आर्ष पाठविधिका अनुसरण करके पढे हुए विद्वानों की एक गुरुशिष्यपरम्परा के माध्यम से अतीव पवित्र यशस्वी विद्वानों की सरल आर्षसरणी जो यहाँ कही गयी है एवं श्लोक में गाई है वह प्रबलधारा बह रही है ऋषिवर के उत्कृष्ट तप से वह पद्धति विजय को प्राप्त होवे।।१०।।

शेष अग्रिम अंक में...

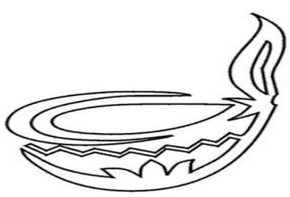

।। तमसो मा ज्योतिर्गमय।।

आओं! हम सभी अन्धकार से प्रकाश की ओर चलें।

दीपावली की हार्दिक शुभकामनाएँ.....

समाचार दर्पण

विजयादशमी के उपलक्ष्य में गुरुकुलीय प्रतिस्पर्धा सम्पन्न.....

विजयादशमी के पावन उपलक्ष्य में आर्यकुमारसभा के द्वारा दश प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। जिसकी अध्यक्षता आचार्य यज्ञवीर शास्त्री जी ने की।इस प्रतियोगिता में छात्रों को तीन वर्गों में विभक्त किया गया था-स्वामी विरजानन्द वर्ग, स्वामी दयानन्द वर्ग और स्वामी श्रद्धानन्द वर्ग। प्रतियोगिता में स्वामी श्रद्धानन्द वर्ग ने सर्वाधिक अंक प्राप्त कर विजय वैजन्ती प्राप्त की।

सर्वप्रथम भाषण प्रतिस्पर्धा का आयोजन किया गया जिसमें अंकित आर्य ने प्रथम, प्रताप आर्य ने द्वितीय एवं गुरुमीत आर्य ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। वाद-विवाद प्रतिस्पर्धा में सारांश और भूपेन्द्र प्रथम, कैलाश और सूर्यप्रताप द्वितीय एवं प्रताप और अनित तृतीय स्थान पर रहे। तीसरी भजन-प्रतिस्पर्धा में नितिन आर्य प्रथम, मंगल आर्य द्वितीय एवं सारांश आर्य तृतीय स्थान पर रहे। चौथी अनुवाद-प्रतिस्पर्धा में भारत आर्य ने प्रथम, सारांश आर्य ने द्वितीय एवं तृतीय स्थान पर भूपेन्द्र आर्य रहे। पाँचवी श्लोक निर्माण समस्यापूर्ति प्रतिस्पर्धा में गौरव आर्य ने प्रथम, यशदेव आर्य ने द्वितीय एवं तृतीय स्थान भूपेन्द्र आर्य ने प्राप्त किया। छठी चित्रकला प्रतिस्पर्धा में रवि आर्य ने प्रथम, अंचल आर्य ने द्वितीय एवं तृतीय स्थान नितिन आर्य ने प्राप्त किया। सातवी आसन- प्रतिस्पर्धा में अनित आर्य प्रथम, विपिन आर्य द्वितीय और सूर्यप्रताप आर्य तृतीय स्थान पर रहे। आठवी श्लोक गायन प्रतिस्पर्धा में गौरव आर्य ने प्रथम, आनन्द आर्य द्वितीय और सारांश आर्य तृतीय स्थान पर रहे। नौवी लेख-लेखन प्रतिस्पर्धा में प्रथम भूपेन्द्र आर्य, द्वितीय गौरव आर्य एवं तृतीय यशदेव आर्य रहे। अन्तिम प्रतिस्पर्धा अष्टाध्यायी सूत्रान्ताक्षरी की हुई जिसमें श्रेणी पूर्व मध्यमा द्वितीय वर्ष और उत्तर मध्यमा प्रथम वर्ष प्रथम स्थान पर रही। इस प्रतिस्पर्धा के संयोजक आचार्य धनंजय थे और संरक्षक आचार्य चन्द्रभूषण शास्त्री। प्रतिस्पर्धा के निर्णायक पद को ब्र. शिवकुमार, ब्र. ओमप्रकाश,ब्र. सत्यकाम,ब्र. विजय आदि ने अलंकृत किया। प्रतिस्पर्धा में सर्वाधिक सहयोग सत्यकाम एवं शिवकुमार का रहा। स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती जी का आशीर्वाद प्रतिभागियों को प्राप्त हुआ। इस अवसर पर आचार्य धनंजय जी ने कहा कि ऐसी प्रतिस्पर्धाओं से ही पर्व मनाना उचित है। यही इस देश की प्राचीन परम्परा रही है।

प्रस्तुतकर्ता : ब्र. सुनीत आर्य

गुरुकुल के निशानेबाजों का शानदार प्रदर्शन.....

५ से १० अक्टूबर तक मझौन स्थित जसपाल राणा शूटिंग एकेडमी में १२ वी उत्तराखण्ड राजस्तरीय शूटिंग प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इसमें गुरुकुल के छात्रों ने अनेक पदक प्राप्त कर गुरुकुल पौन्धा का नाम रोशन किया। इस प्रतियोगिता में शिवदेव आर्य ने ओपन साईड एयर राइफल १० मीटर में व्यक्तिगत जूनियर वर्ग में स्वर्ण पदक प्राप्त किया। इसी प्रतिस्पर्धा के सीनियर वर्ग में अक्षय कुमार ने व्यक्तिगत स्वर्ण पदक प्राप्त किया।

१० मीटर ओपन साईड राईफल में अक्षय कुमार ने व्यक्तिगत कांस्य पदक प्राप्त किया। इस छात्र ने ५० मीटर फ्री पिस्टल में व्यक्तिगत एवं टीम वर्ग में भी स्वर्ण पदक प्राप्त किया। १० मीटर एयर पिस्टल टीम वर्ग में रजत पदक प्राप्त किया। अनुदीप ने ५० मीटर फ्री पिस्टल में व्यक्तिगत रजत एवं टीम वर्ग में स्वर्ण पदक प्राप्त किया। १० मीटर एयर पिस्टल में गुरुकुल की टीम हंसराज, मंगल, मोनु कुमार ने जुनियर वर्ग में कांस्य पदक प्राप्त किया।

पदक प्राप्त छात्रों का गुरुकुल में पधारने पर गुरुकुल के संस्थापक स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती एवं आचार्य डॉ धनंजय ने छात्रों को अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आशिर्वाद प्रदान किया। समस्त गुरुकुल परिवार ने छात्रों का सहृदय से स्वागत किया।

प्रस्तुतकर्ता : ब्र. विजय आर्य

श्रीकृष्ण आर्ष गुरुकुल देवालय गौमत का वार्षिकोत्सव सम्पन्न.....

अलीगढ़ में स्थिति वेदार्ष महाविद्यालय-न्यास ११९ गुरुकुल गौतम नगर की शाखा क्र. ५ का २७ अक्टूबर को वार्षिकोत्सव हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर आचार्य दिनेश जी, श्री राजवीर वैद्य जी, आचार्य डॉ. धनंजय जी, आचार्य जयकुमार जी, आचार्य यज्ञवीर शास्त्री जी, आचार्य बुद्धदेव जी, स्वामी चैतनदेव जी, देशराज जी एवं उदयवीर सिंह आदि अनेक वैदिक विद्वानों ने अपने अमृत वचनों से गुरुकुल में पधारे श्रद्धालुओं की ज्ञानपिपासा को शान्त किया। गुरुकुल के छात्रों ने अपने भाषण, भजन, कविता आदि प्रस्तुत किये, जिसकी उपस्थित आर्य जनता ने बहुशः प्रसंशा की । वार्षिकोत्सव के समापन सत्र में संस्था के संस्थापक स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती जी के द्वारा आर्य जनता को अशिर्वाद प्रदान किया गया। अन्त में गुरुकुल के आचार्य स्वामी श्रद्धानन्द जी ने सभी का हृदय से आभार एवं धन्यवाद प्रकट किया।

प्रस्तुतकर्ता : यशोदेव आर्य

गुरुकुल मंझावली, फरीदाबाद में योग साधना एवं चिकित्सा शिविर सम्पन्न.....

वेदार्ष महाविद्यालय-न्यास ११९ गुरुकुल गौतम नगर की शाखा क्र.-२ में ७ अक्टूबर को प्रारम्भ होकर १७ अक्टूबर को योग साधना एवं चिकित्सा शिविर सम्पन्न हुआ। शिविर स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती जी के मार्गदर्शन में सम्पन्न हुआ। इस शिविर में सामवेद पारायण महायज्ञ का भी समापन हुआ। पं. वेदपाल जी, सोमदेव शास्त्री जी (मुम्बई) , स्वामी देवव्रत सरस्वती जी आदि आर्य जगत् के मूर्धन्य विद्वानों के द्वारा सत्यार्थ-प्रकाश का पाठ कराया गया एवं स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती जी द्वारा आसन, प्रणायाम, ध्यान और समाधि की प्रक्रिया को कराया गया। शिविर में लगभग ७० से अधिक साधक उपस्थिति हो शिविर का लाभ लिया। शिविर समापन के अवसर पर स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती जी द्वारा सभी साधकों को आशिर्वाद प्रदान किया। इस अवसर पर गुरुकुल के आचार्य जयकुमार जी एवं स्वामी शान्तानन्द जी ने सभी का आभार एवं धन्यवाद प्रकट किया।

प्रस्तुतकर्ता : गौरव आर्य

निरंजनपुर में आर्य वीरदल शिविर सम्पन्न.....

१५ सितम्बर से १५ अक्टूबर तक ग्राम निरंजनपुर में आर्य भजनोपदेशक एवं आर्य समाज निरंजनपुर के अध्यक्ष श्री सत्यपाल सरल के मार्गदर्शन में आर्य वीरदल शिविर का आयोजन किया गया, जिसका शुभारम्भ गुरुकुल पौन्धा के आचार्य धनंजय जी के द्वारा किया गया। शिविर में लगभग ५० आर्य वीरों को गुरुकुल के सुखदेव एवं सचिन कुमार द्वारा सर्वाङ्गसुन्दर, आसन, सूर्य नमस्कार, भूमि नमस्कार, चन्द्र नमस्कार, प्राणायाम, नियुद्धम, दण्ड़-बैठक, लाठी आदि का प्रशिक्षण दिया।

१५ अक्टूबर से २० अक्टूबर तक रामकथा का आयोजन सत्यपाल सरल जी द्वारा किया गया। इस आयोजन में आचार्य धनंजय जी (गुरुकुल-पौन्धा, देहरादून), आचार्य यज्ञवीर जी (गुरुकुल-पौन्धा, देहरादून), डॉ. वेद प्रकाश गुप्ता जी (मानव कल्याण केन्द्र), डॉ. सुरेन्द्र कुमार (कुलपति गुरुकुल कांगडी), संदीप वैदिक,ऋषिपाल आर्य, आचार्य आजाद आदि वैदिक विद्वान् उपस्थित रहे। कार्यक्रम के समापन पर समाज के मन्त्री श्री श्रमवीर जी ने सभी का आभार एवं धन्यवाद प्रकट किया।

प्रस्तुतकर्ता : ब्र. सुखदेव आर्य

ईश्वर-तत्त्व-विज्ञान-शिविर का आयोजन.....

आपको सहर्ष सूचित किया जाता है कि आपके अपने ही श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास की ओर से न्यास प्रमुख एवं वैदिक विज्ञान गवेषक पूज्यपाद आचार्य श्री अग्निव्रत नैष्ठिक जी के संचालन में त्रिदिवसीय **ईश्वर-तत्त्व-विज्ञान-शिविर ११, १२ एवं १३ नवम्बर २०१३** को आयोजित किया जा रहा है। इस शिविर में विभिन्न गम्भीर विषयों पर वैज्ञानिक चर्चा की जायेगी। आप सभी आर्य जनता से निवेदन है कि आप अपना अमूल्य समय निकाल कर इस समारोह में उपस्थित हो।

निवेदक : आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक
श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास,वेद विज्ञान मन्दिर,
भागलभीम, भीनमाल, जिला.-जालार (राजस्थान)

संस्कृत-शिक्षणम्

ब्र. सत्यकामार्य

अयि सुधियः पाठकाः! संस्कृतस्य शिक्षणं न कठिनम्। संस्कृतं तु अतीव सरलं मधुरं च वर्त्तते। आगच्छत वयं प्रयोगं कृत्वा पश्यामः। एतस्मिन् विभागे प्रत्यङ्गं व्यावहारिकज्ञानाय सरलानि कानिचन वाक्यानि सरला नियमाश्च प्रदीयन्ते। अत्र विचार्य पठित्वा भवन्तोऽपि संस्कृतेन व्यवहारं कर्तुमर्हन्ति।

मारने वाले से रक्षा करने वाला बडा होता है।	हन्तुः रक्षिता ज्येष्ठः भवति ।
आप किन ग्रन्थों के पढनेवाले है।	भवान् केषां ग्रन्थानां पठिता अस्ति।
यहाँ कितने पढने वाले हैं?	अत्र कियन्तः पठितारः ?
इस पुस्तक को बनाने वाले मेरे दो मित्र हैं।	पुस्तकस्यास्य रचयितृणी मम मित्रे स्तः।
भारत का शासन करनेवाली एक देवी है।	भारतस्य शासित्री एका देवी वर्तते।
गानेवालों को गरम भोजन दें।	गायकेभ्यः उष्णं भोजनं ददातु।
राजा के नहलाने वाले कहाँ है?	राज्ञः स्नापकाःकुत्र सन्ति ?
इस बारात मे बाजा बजाने वाले नहीं है।	अस्यां वरयात्रायां वादकाः न सन्ति।
यह लकडी फाडने वाला है।	एषः काष्ठभेदकोऽस्ति।
शराब मनुष्य के शरीर को नष्ट कर देती है।	सुरा मनुष्यस्य शरीरस्य नाशिकाऽस्ति ।

नियमः -

१. **'ण्वुल्तृचौ'** सर्वधातुभ्यां कर्तृ कारके ण्वुल्तृचौ प्रत्ययौ भवतः । आभ्यां योगे (कर्तृकर्मणोः कृति) अनेन षष्ठी विभक्तिर्भवति। यथा-भोजनस्य हर्ता, कार्यस्य कर्ता । ण्वुल्तृचप्रत्ययान्तौ शब्दाः विशेषणशब्दाः भवन्ति । पुल्लिङ्गे कर्तृवत्, स्त्रीलिङ्गे नदीवत् नपुसंकलिङ्गे च कर्तृवत्।

धातुरूपम्	**एकवचनम्**	**द्विवचनम्**	**बहुवचनम्**
शुच् शोके (शोक करना)	शोचति	शोचतः	शोचन्ति
परस्मैपदम्	शोचसि	शोचथः	शोचथ
लट् लकारः	शोचामि	शोचावः	शोचामः

शब्दकोशः -

व्योमयानम्	हवाई जहाज।	पावकः	आग।
विमानः	हवाई जहाज।	कृशानुः	आग।
अग्निः	आग।	शिखावान्	आग।
वैश्वानरः	आग।	हुतभुग्	आग।
बलिः	आग।	स्फुलिङ्गः	चिंगारी।
अनलः	आग।	अग्निकणः	चिंगारी।